

[2024] 2 एससीआर 638 : 2024 आईएनएससी 125

मोहम्मद अबाद अली व अन्य

बनाम

राजस्व अभियोजन आसूचना निदेशालय

(आपराधिक अपील सं. 1056/2024)

20 फरवरी 2024

[न्या. सुधांशु धूलिया* एवं न्या. प्रसन्ना भालचंद्र वराले]

विचारणीय विवादक

क्या दोषमुक्त किये जाने के विरुद्ध अपील में परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 2 व 3 के साथ पठन पर धारा 5 का लाभ लिया जा सकता है।

शीर्षटिप्पणियां

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 378 - परिसीमा अधिनियम, 1963 - धारा 5 के सह पठन पर धारा 2 एवं 3 - यहां अपीलार्थी ने सीमा शुल्क अधिनियम की धारा 135(1)(ख) के तहत विचारण का सामना किया - दोषमुक्त किया गया - दं.प्र.सं. की धारा 378 के तहत दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील उच्च न्यायालय में विलंब की माफी हेतु एक आवेदन के साथ दायर किया गया था - उक्त आवेदन को अनुमति दी गई थी - उक्त आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी ने दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत इस आधार पर याचिका दायर की थी कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील के मामले में लागू नहीं होगी क्योंकि दोषमुक्त किए जाने के

विरुद्ध अपील दायर करने की अवधि दं.प्र.सं. की धारा 378(5) के तहत ही विहित की गई है, जहां विलंब की माफी का कोई प्रावधान नहीं है - औचित्य:

अभिनिर्धारित: इसमें कोई संदेह नहीं है कि जहां एक विशेष विधि सीमा की अवधि विहित करता है, वहां परिसीमा अधिनियम की धारा 5 लागू नहीं होगी, केवल विशेष विधि में प्रयोग की गई भाषा के अधीन - सीमा की अवधि निर्धारित करने वाली भाषा भी एक महत्वपूर्ण कारक है - वर्तमान मामले में, दं.प्र.सं. की धारा 378 के तहत या संहिता में किसी अन्य स्थान पर ऐसा कोई अपवर्जन का प्रावधान नहीं है - इसलिए परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 2 एवं 3 के साथ धारा 5 का लाभ दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील में शामिल किया जा सकता है - वर्तमान मामले में परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के गैर-आवेदन होने के संबंध में अपीलार्थीगण द्वारा उठाए गए प्रतिविरोधों में कोई बल नहीं है। [पैरा 11]

उद्धृत निर्णयज विधि

कौशल्या रानी बनाम गोपाल सिंह [1964] 4 एससीआर 982; मंगू राम बनाम दिल्ली नगर निगम, [1976] 2 एससीआर 260 : (1976) 1 एससीसी 392 - से संदर्भित।

हुकुमदेव नारायण यादव बनाम ललित नारायण मिश्रा, [1974] 3 एससीआर 31 : एआईआर 1974 एससी 480; गोपाल सरदार बनाम करुणा सरदार, [2004] 2 एससीआर 826 : 2004 (4) एससीसी 252 - अप्रयोज्य अभिनिर्धारित।

अंजनाबाई बनाम यशवंतराव दौलतराव दूधे आईएलआर (1961) बॉम 135 - से संदर्भित।

अधिनियमों की सूची

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973; परिसीमा अधिनियम, 1963

प्रमुख शब्दों की सूची

अपवर्जन प्रावधान; दोषमुक्त किये जाने के विरुद्ध अपील में परिसीमा अधिनियम की धारा 5 का लाभ।

से उद्भूत मामलें

आपराधिक अपीलीय न्यायनिर्णयन: आपराधिक अपील सं. 1056/2024

आप.वि.आ. 13802/2016 एवं आप.अनु.या. सं. 330/2013 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के दिनांक 20.01.2017 के निर्णय एवं आदेश से

पक्षकारों की ओर से उपस्थितियां

मो. शाहिद अनवर, विजय अग्रवाल, चेतन, मुकल, अपीलार्थीगण की ओर से अधिवक्तागण

विक्रमजीत बनर्जी, ए.एस.जी., मुकेश कुमार मारोरिया, श्रीमती प्रियंका दास, नचिकेता जोशी, श्रीमती मेरुसागर सामंताराय, ईशान शर्मा, प्रत्यर्थीगण की ओर से अधिवक्तागण

उच्चतम न्यायालय का निर्णय/आदेश

निर्णय

सुधांशु धूलिया, न्या.

अनुमति प्रदानित

1. वर्तमान अपीलार्थी सीमा शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 135(1)(ख) के तहत संस्थित एक मामले में चार आरोपियों में से एक था। उसने वाद का सामना किया (एस.सी. सं. 33/2009) जहां उसे अंततः अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, उत्तर, दिल्ली द्वारा दिनांक 06.10.2012 के आदेश के माध्यम से दोषमुक्त कर दिया गया।
2. दोषमुक्त किए जाने के आदेश के विरुद्ध राजस्व आसूचना निदेशालय ने दिनांक 27.06.2013 को उच्च न्यायालय में अपील दायर की। दं.प्र.सं. की धारा 378 के तहत दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध दायर की गई उस अपील के साथ विलंब माफी आवेदन भी था, क्योंकि अपील 72 दिनों के विलंब से की गई थी। विलंब माफी आवेदन को दिल्ली उच्च न्यायालय ने दिनांक 18.05.2016 को स्वीकार कर लिया था।
3. इसके बाद वर्तमान अपीलार्थी ने दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष उक्त आदेश को वापस लेने हेतु एक आवेदन दायर किया, इन आधारों पर कि दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील के मामले में परिसीमा अधिनियम की धारा 5 लागू नहीं होगी क्योंकि दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील दायर करने की अवधि दं.प्र.सं. की धारा 378(5) के तहत ही विहित की गई है, जहां विलंब हेतु माफी का कोई प्रावधान नहीं है। दिनांक 20.01.2017 के आदेश द्वारा दिल्ली उच्च न्यायालय ने फिर भी अपीलार्थी द्वारा दायर वापस लेने के आवेदन को खारिज कर दिया, हालांकि धारा 482 के तहत आवेदन को खारिज करते समय कोई कारण नहीं बताए गए थे।
4. इस आदेश को हमारे समक्ष इस आधार पर चुनौती दी गई है कि उच्च न्यायालय ने लोक सेवक द्वारा दोषमुक्ति के विरुद्ध विलंब से दायर अपील को स्वीकार करके स्पष्ट त्रुटि की है, क्योंकि उच्च न्यायालय के

पास विलंब को माफ करने की कोई शक्ति नहीं है, क्योंकि जहां तक परिसीमा का प्रश्न है, धारा 378 एक स्व-निहित संहिता है, क्योंकि दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील दायर करने हेतु परिसीमा अधिनियम में कोई अवधि विहित नहीं की गई है, इसलिए परिसीमा अधिनियम के प्रावधान इस पर लागू नहीं होंगे।

5. अपने तर्क के समर्थन में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री विजय कुमार अग्रवाल ने कौशल्या रानी बनाम गोपाल सिंह [1964] 4 एससीआर 982 में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है। कौशल्या रानी के तथ्य इस प्रकार हैं: कौशल्या रानी ने गोपाल सिंह के विरुद्ध भा.दं.सं. की धारा 493 तथा वैकल्पिक रूप से भा.दं.सं. की धारा 496 के तहत मामला दर्ज कराया था, जिसमें आरोप लगाया गया था कि गोपाल सिंह ने धोखे से उसे विश्वास दिलाया था कि वह उसका विधिपूर्वक विवाहित पति है तथा इस तरह उसके साथ यौन संबंध बनाये थे। गोपाल सिंह ने वाद का सामना किया जिसमें उन्हें विचारण न्यायालय ने दोषमुक्त कर दिया तथा दोषमुक्त होने के विरुद्ध कौशल्या रानी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (एतदपश्चात् “पुरानी दं.प्र.सं.” के रूप में संदर्भित) की धारा 417 के तहत अपील दायर की गई। पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा सीमा के आधार पर अपील को खारिज कर दिया गया था। इस प्रकार यह मामला कौशल्या रानी द्वारा इस न्यायालय के समक्ष उठाया गया था। पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए फिटनेस प्रमाण पत्र पर इस न्यायालय के समक्ष मामला दायर किया गया था तथा इस न्यायालय के समक्ष निर्धारण के लिए प्रश्न यह था कि क्या परिसीमा अधिनियम, 1908 की धारा 5 (अर्थात् अधिनियम 1908/9 अर्थात् पुरानी परिसीमा अधिनियम) के प्रावधान पुराने दं.प्र.सं. की धारा 417 की उप-धारा 3 के

तहत दोषमुक्त करने के आदेश से अपील करने हेतु विशेष अनुमति हेतु आवेदन पर लागू होंगे।

6. इस न्यायालय ने पुरानी दं.प्र.सं. की धारा 417 की उपधारा 4 तथा पुराने परिसीमा अधिनियम अर्थात् भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1908 की धारा 29(2) की व्याख्या करते हुए अभिनिर्धारित किया कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 पुराने दं.प्र.सं. की धारा 417 की उपधारा 3 के अंतर्गत उच्च न्यायालय में अपील करने की अनुमति हेतु आवेदन में लागू नहीं होगी, क्योंकि धारा 417 अपने आप में एक विशेष संहिता है तथा इसमें निर्धारित सीमा 60 दिन की है तथा न्यायालय को विलंब को माफ करने के लिए ऐसी सीमा में ढील देने का कोई अधिकार नहीं है। बॉम्बे उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय **[अंजनाबाई बनाम यशवंतराव दौलतराव दुधे आईएलआर (1961) बॉम् 135]** पर भरोसा करते हुए, जिसने अभिनिर्धारित किया कि धारा 417(4) परिसीमा अधिनियम की धारा 29(2) के अर्थ में विशेष विधि थी

इस न्यायालय की तत्काल सुविधा हेतु, पुराने परिसीमा अधिनियम की धारा 29(2) नीचे पुनः प्रस्तुत की गई है:

"(2) जहां कोई विशेष या स्थानीय विधि किसी वाद, अपील या आवेदन हेतु प्रथम अनुसूची द्वारा उसके लिए निर्धारित अवधि से भिन्न सीमा अवधि निर्धारित करता है, वहां धारा 3 के उपबंध लागू होंगे, मानो ऐसी अवधि उस अनुसूची में उसके लिए विहित की गई हो, तथा किसी विशेष या स्थानीय विधि द्वारा किसी वाद, अपील या आवेदन हेतु निर्धारित सीमा अवधि विहित करने के प्रयोजन हेतु -

(क) धारा 4, धारा 9 से 18 एवं धारा 22 में निहित प्रावधान केवल वहां तक और उस सीमा तक लागू होंगे जहां तक उन्हें ऐसे विशेष या स्थानीय विधि द्वारा स्पष्ट रूप से अपवर्जित नहीं किया गया है; तथा

(ख) इस अधिनियम के शेष प्रावधान लागू नहीं होंगे।”

उपर्युक्त प्रावधान के अवलोकन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि जहां किसी वाद, अपील या आवेदन में सीमा अवधि विहित करने वाला कोई विशेष या स्थानीय विधि है, जो परिसीमा अधिनियम की पहली अनुसूची में निर्धारित सीमा अवधि से भिन्न है, वहां परिसीमा अधिनियम की प्रयोज्यता केवल परिसीमा अधिनियम की धारा 4 तथा धारा 9 से 18 एवं 22 के संबंध में होगी। इसका अर्थ यह है कि पुराने अधिनियम की धारा 5 को उन मामलों में स्पष्ट रूप से बाहर रखा गया था जहां विशेष विधि या स्थानीय विधि सीमा अवधि के लिए प्रावधान करता है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि यद्यपि वर्तमान मामले में हम वर्तमान दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 तथा नए परिसीमा अधिनियम, 1963 का निपटान कर रहे हैं, तथापि, दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील हेतु वर्तमान संहिता में प्रावधान, अर्थात् दं.प्र.सं. की धारा 378 के तहत अपील दायर करने हेतु परिसीमा अवधि के निर्धारण के संबंध में समान प्रकृति के हैं तथा इसलिए कौशल्या रानी (पूर्वोक्त) द्वारा निर्धारित विधि वर्तमान मामले में भी लागू होगी।

7. विद्वान अधिवक्ता की यह प्रस्तुति त्रुटिपूर्ण है। कौशल्या रानी (पूर्वोक्त) में इस न्यायालय के निर्णय के पश्चात्, इस न्यायालय ने मंगू राम बनाम दिल्ली नगर निगम (1976) 1 एससीसी 392 में, सीमा की इसी तरह की समस्या (दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील में) का निपटान करते समय, कौशल्या रानी को अलग कर दिया क्योंकि कौशल्या रानी पुरानी दंड

प्रक्रिया संहिता, 1898 तथा पुराने परिसीमा अधिनियम, 1908 का निपटान कर रही थीं, जहाँ प्रावधानों को अलग-अलग शब्दों में लिखा गया था। परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 29(2) के सह पठन नई दं.प्र.सं. की धारा 378 के तहत, हालांकि सीमा विहित की गई है, फिर भी अधिनियम 1963 की धारा 29(2) धारा 5 के आवेदन को अपवर्जित नहीं करती है। परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 29(2) इस प्रकार है:-

"(2) जहां कोई विशेष या स्थानीय विधि किसी वाद, अपील या आवेदन के लिए अनुसूची द्वारा निर्धारित अवधि से भिन्न सीमा अवधि निर्धारित करता है, वहां धारा 3 के प्रावधान लागू होंगे जैसे कि ऐसी अवधि अनुसूची द्वारा विहित अवधि थी तथा किसी विशेष या स्थानीय विधि द्वारा किसी वाद, अपील या आवेदन हेतु निर्धारित सीमा अवधि निर्धारित करने के प्रयोजन हेतु, धारा 4 से 24 (समावेशी) में निहित प्रावधान केवल वहां तथा उस सीमा तक, लागू होंगे जहां उन्हें ऐसे विशेष या स्थानीय विधि द्वारा स्पष्ट रूप से अपवर्जित नहीं किया गया है।"

(जोर दिया गया)

यहाँ महत्वपूर्ण अंतर परिसीमा अधिनियम की धारा 5 की प्रयोज्यता का है। दोनों परिसीमा अधिनियमों में, अर्थात् परिसीमा अधिनियम 1908 तथा वर्तमान परिसीमा अधिनियम 1963, दोनों अधिनियमों की धारा 5 में सीमा अवधि के विस्तार का प्रावधान दिया गया है। जबकि अधिनियम 1908 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि विशेष अधिनियमों में सीमा अवधि दिए जाने पर धारा 5 लागू नहीं होगी, 1963 अधिनियम धारा 5 को विशेष विधियों में भी लागू करता है जब सीमा अवधि निर्धारित की जाती है, जब तक कि इसे ऐसी विशेष विधियों द्वारा स्पष्ट रूप से

अपवर्जित नहीं रखा जाता है। दोनों अधिनियमों में धारा 29(2) का तुलनात्मक प्रावधान नीचे दिया गया है:-

पुराने परिसीमा अधिनियम 1908 की धारा 29(2)	नये परिसीमा अधिनियम 1963 की धारा 29(2)
(2) जहां कोई विशेष या स्थानीय विधि किसी वाद, अपील या आवेदन हेतु प्रथम अनुसूची द्वारा उसके लिए निर्धारित अवधि से भिन्न सीमा अवधि निर्धारित करता है, वहां धारा 3 के उपबंध इस प्रकार लागू होंगे मानो ऐसी अवधि उस अनुसूची में उसके लिए निर्धारित की गई हो तथा किसी विशेष या स्थानीय विधि द्वारा किसी वाद, अपील या आवेदन हेतु निर्धारित सीमा अवधि अवधारित करने के प्रयोजन हेतु: (क) <u>धारा 4, धारा 9 से धारा 18 एवं धारा 22 में निहित प्रावधान केवल वहां तक तथा उस सीमा तक लागू होंगे, जहां तक उन्हें ऐसे विशेष या स्थानीय विधि द्वारा स्पष्ट रूप से अपवर्जित नहीं किया गया है; तथा</u> (ख) <u>इसके अधिनियम के शेष प्रावधान लागू नहीं होंगे।</u>	(2) जहां कोई विशेष या स्थानीय विधि किसी वाद, अपील या आवेदन हेतु अनुसूची द्वारा निर्धारित अवधि से भिन्न सीमा अवधि निर्धारित करता है, वहां धारा 3 के प्रावधान लागू होंगे जैसे कि ऐसी अवधि अनुसूची द्वारा निर्धारित अवधि थी तथा किसी विशेष या स्थानीय विधि द्वारा किसी वाद, अपील या आवेदन हेतु निर्धारित सीमा अवधि को <u>निर्धारित करने के प्रयोजन के लिए, धारा 4 से 24 (समावेशी) में निहित प्रावधान केवल वहां तक लागू होंगे, तथा उस सीमा तक, जिस तक वे ऐसे विशेष या स्थानीय विधि द्वारा स्पष्ट रूप से अपवर्जित नहीं हैं।</u>

जैसा कि कौशल्या रानी (पूर्वोक्त) का निर्णय पुराने परिसीमा अधिनियम 1908 के प्रावधानों के तहत किया गया था, मंगू राम (पूर्वोक्त) में इस न्यायालय ने कौशल्या रानी को सुभिन्न किया तथा निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया:

"जहां तक धारा 29 की उपधारा (2) में निहित प्रावधान का संबंध है, परिसीमा अधिनियम, 1963 द्वारा एक महत्वपूर्ण बदलाव किया गया है। जबकि, भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1908 के तहत धारा 29, उपधारा (2), खंड (ख) में प्रावधान किया गया है कि किसी भी विशेष या स्थानीय विधि द्वारा किसी भी वाद, अपील या आवेदन हेतु निर्धारित सीमा की किसी भी अवधि को निर्धारित करने के प्रयोजन हेतु, भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1908 के प्रावधान, धारा 4, 9 से 18 तथा 22 में निहित प्रावधानों के अलावा, लागू नहीं होंगे एवं इसलिए, धारा 5 की प्रयोज्यता स्पष्ट तथा विशिष्ट शर्तों में अपवर्जित की थी, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 29, उपधारा (2) इतने सारे शब्दों में अधिनियमित करती है कि किसी भी विशेष या स्थानीय विधि द्वारा किसी भी वाद, अपील या आवेदन हेतु निर्धारित सीमा अवधि को निर्धारित करने के प्रयोजन हेतु धारा 4 से 24 में निहित प्रावधान, जिसमें धारा 5 शामिल होगी, वहां तक एवं उस सीमा तक लागू होंगे जहां तक वे ऐसे विशेष या स्थानीय विधि द्वारा स्पष्ट रूप से अपवर्जित नहीं किये गये हैं। भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1908 की धारा 29, उप-धारा (2), खंड (ख) ने धारा 5 की प्रयोज्यता को विशेष रूप से अपवर्जित रखा है, जबकि परिसीमा

अधिनियम, 1963 की धारा 29, उप-धारा (2) स्पष्ट एवं असंदिग्ध शब्दों में धारा 5 की प्रयोज्यता प्रदान करती है तथा कौशल्या रानी मामले में निर्णय का विनिश्चय आधार, इसलिए, परिसीमा अधिनियम, 1963 द्वारा शासित मामलों में लागू नहीं हो सकता है, क्योंकि वह निर्णय इस परिकल्पना पर आगे बढ़ा था कि धारा 5 की प्रयोज्यता को भारतीय परिसीमा अधिनियम, 1908 की धारा 29(2)(ख) के कारण बाहर रखा गया था। चूंकि परिसीमा अधिनियम, 1963 के तहत, धारा 5 को विशेष रूप से धारा 29, उप-धारा (2) द्वारा लागू किया गया है, इसका लाभ किसी विशेष या स्थानीय विधि द्वारा निर्धारित सीमा अवधि को बढ़ाने के उद्देश्य से उठाया जा सकता है यह केवल तभी होगा जब विशेष या स्थानीय विधि धारा 5 की प्रयोज्यता को स्पष्ट रूप से अपवर्जित करता है, कि यह विस्थापित हो जाएगा। यहां, जैसा कि कौशल्या रानी मामले में इस न्यायालय द्वारा इंगित किया गया है कि धारा 417 की उप-धारा (4) में निर्धारित साठ दिनों की समय सीमा एक विशेष परिसीमा विधि है तथा हमें इस विशेष विधि में ऐसा कुछ नहीं मिला जो धारा 5 की प्रयोज्यता को स्पष्ट रूप से अपवर्जित करता हो। यह सच है कि धारा 417 की उप-धारा (4) की भाषा अनिवार्य एवं बाध्यकारी है, जिसमें यह स्पष्ट रूप से प्रावधान करता है कि दोषमुक्त करने के आदेश से अपील करने हेतु विशेष अनुमति देने के किसी भी आवेदन पर दोषमुक्त करने के आदेश की तिथि से साठ दिनों की समाप्ति के पश्चात् उच्च न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया

जाएगा। लेकिन यह परिसीमा की अवधि निर्धारित करने वाले प्रत्येक प्रावधान की भाषा होगी। ऐसा इसलिए है क्योंकि किसी आवेदन को सीमा अवधि के बाद स्वीकार करने पर रोक विशेष या स्थानीय विधि द्वारा लगाई जाती है, इसलिए धारा 5 की सहायता लेना आवश्यक हो जाता है ताकि ऐसे प्रतिबंध के बावजूद आवेदन पर विचार किया जा सके। केवल सीमा अवधि का प्रावधान, चाहे वह किसी भी प्रकार की अनिवार्य या आदेशात्मक भाषा में हो, धारा 5 की प्रयोज्यता को समाप्त करने हेतु पर्याप्त नहीं है। इसलिए यह निष्कर्ष अपरिहार्य है कि ऐसे मामले में जहां दोषमुक्त करने के आदेश के विरुद्ध अपील करने की विशेष अनुमति के लिए आवेदन परिसीमा अधिनियम, 1963 के लागू होने के बाद दायर किया जाता है, धारा 5 आवेदक हेतु उपलब्ध होगी एवं यदि वह यह दिखा सके कि उसके पास धारा 417 की उपधारा (4) में निर्धारित साठ दिनों की समय सीमा के भीतर आवेदन न करने का पर्याप्त कारण था, तो आवेदन पर रोक नहीं होगी तथा साठ दिनों की समय सीमा समाप्त होने के बावजूद उच्च न्यायालय को इसे स्वीकार करने का अधिकार होगा।

(जोर दिया गया)

8. श्री विजय कुमार अग्रवाल, विद्वान अधिवक्ता ने दो मामलों अर्थात्, **हुकुमदेव नारायण यादव बनाम ललित नारायण मिश्रा [एआईआर 1974 एससी 480]** तथा बाद में **गोपाल सरदार बनाम करुणा सरदार [2004 (4) एससीसी 252]** पर भरोसा जताया।

9. उपरोक्त दोनों मामले विशेष विधि से संबंधित थे, जहां सीमा अवधि विहित की गई थी। जबकि हुकुमदेव नारायण यादव (पूर्वोक्त) निर्वाचन मामले से संबंधित है, जहां लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 81 में निर्वाचन याचिका दायर करने हेतु 45 दिनों की सीमा निर्धारित की गई है, गोपाल सरदार (पूर्वोक्त) ने पश्चिम बंगाल भूमि सुधार अधिनियम, 1955 की धारा 8 के तहत अधिभोग के अधिकार का निपटान किया, जिसमें संबंधित अधिकारियों को अधिभोग हेतु आवेदन करने के लिए एक बारगादार के लिए तीन महीने तथा 'रैयत' के लिए चार महीने की सीमा निर्धारित की गई है।
10. इस तर्क से कोई विवाद नहीं हो सकता कि जहां कोई विशेष विधि सीमा अवधि निर्धारित करता है, वहां परिसीमा अधिनियम की धारा 5 लागू नहीं होगी, केवल विशेष विधि में प्रयोग की गई भाषा के अधीन सीमा अवधि निर्धारित करने वाली भाषा भी एक महत्वपूर्ण कारक है। उदाहरण के लिए, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 81 निर्वाचन याचिका प्रस्तुत करने के लिए सीमा निर्धारित करती है, जैसा कि नीचे दिया गया है:-

"81. याचिकाओं का प्रतिनिधित्व - (1) किसी निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली निर्वाचन याचिका धारा 100 की उपधारा (1) तथा धारा 101 में विनिर्दिष्ट एक या अधिक आधारों पर ऐसे निर्वाचन में किसी अभ्यर्थी या किसी निर्वाचक द्वारा [निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन की तिथि से पैंतालीस दिन के भीतर, किन्तु उससे पूर्व नहीं या यदि निर्वाचन में एक से अधिक निर्वाचित अभ्यर्थी हैं और उनके निर्वाचन की तिथि भिन्न हैं तो उन दो तिथियों में से पश्चातवर्ती तिथि को] उच्च न्यायालय में प्रस्तुत की जा सकेगा।

स्पष्टीकरण:- इस उपधारा में, "निर्वाचक" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो उस निर्वाचन में मतदान करने का हकदार था जिससे निर्वाचन याचिका संबंधित है, चाहे उसने ऐसे निर्वाचन में मतदान किया हो या नहीं।

(2) [छोड़ दिया गया]

(3) प्रत्येक निर्वाचन याचिका के साथ उसकी उतनी प्रतियां संलग्न की जाएंगी जितने प्रत्यर्थीगण का याचिका में उल्लेख है [* * *] तथा ऐसी प्रत्येक प्रति को याचिकाकर्ता द्वारा अपने हस्ताक्षर से याचिका की सत्य प्रतिकृति के रूप में सत्यापित किया जाएगा।”

धारा 86(1) में आगे कहा गया है कि यदि निर्वाचन याचिका 45 दिनों की अवधि से अधिक समय के बाद दायर की जाती है तो उसे खारिज कर दिया जाएगा। धारा 86(1) इस प्रकार है:-

"86. निर्वाचन याचिकाओं का विचारण - (1) उच्च न्यायालय ऐसी निर्वाचन याचिका को खारिज कर देगा जो धारा 81 या धारा 82 या धारा 117 के प्रावधानों का अनुपालन नहीं करती है।

स्पष्टीकरण:- इस उपधारा के अधीन निर्वाचन याचिका खारिज करने वाला उच्च न्यायालय के आदेश धारा 98 के खंड (क) के अधीन दिया गया आदेश समझा जाएगा।”

इस प्रकार निर्वाचन विधि स्पष्ट रूप से 45 दिनों से अधिक समय के लिए निर्वाचन याचिका दायर करने पर रोक लगाता है। विधि की भाषा इस संबंध में कोई अस्पष्टता नहीं छोड़ती। विधि में दी गई भाषा है,

"उच्च न्यायालय निर्वाचन याचिका को खारिज कर देगा"। सीधे शब्दों में कहें तो न्यायालय के पास 45 दिनों की अवधि से अधिक समय हेतु दायर की गई निर्वाचन याचिका को खारिज करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है।

निर्वाचन के मामले में देरी को माफ करने की कोई गुंजाइश नहीं है। इसलिए हुकुमदेव नारायण यादव (पूर्वोक्त) में यह कहा गया था:-

"17. यद्यपि परिसीमा अधिनियम की धारा 29(2) को अधिनियम के साथ-साथ दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अपीलों पर भी लागू किया गया है, फिर भी हमारे संज्ञान में ऐसा कोई मामला नहीं लाया गया है, जहां धारा 29(2) को अधिनियम की धारा 81 के तहत दायर निर्वाचन याचिका पर लागू किया गया हो, जिसके आधार पर परिसीमा अधिनियम की धारा 4, 5 या 12 लागू हुई हों। यह मानते हुए भी कि जहां परिसीमा अधिनियम की अनुसूची में निर्वाचन याचिकाओं के लिए सीमा की अवधि तय नहीं की गई है, जो अधिनियम की धारा 81 के तहत तय की गई अवधि से अलग है, धारा 29(2) लागू होगी, तथा हमें यह निर्धारित करना है कि क्या इस धारा के प्रावधानों को निर्वाचन याचिका के मामले में स्पष्ट रूप से बाहर रखा गया है..... हमारे विचार में, यहां तक कि ऐसे मामले में जहां विशेष विधि एक स्पष्ट संदर्भ द्वारा परिसीमा अधिनियम की धारा 4 से 24 के प्रावधानों को अपवर्जित नहीं करता है, फिर भी यह न्यायालय हेतु स्वतंत्र है कि वह जांच करे कि क्या और किस हद तक उन प्रावधानों की प्रकृति या विशेष विधि की विषय-वस्तु एवं योजना की

प्रकृति उनके संचालन को बाहर रखती है। परिसीमा अधिनियम की धारा 3 के प्रावधान है कि निर्धारित अवधि के बाद दायर किया गया वाद, अपील एवं किया गया आवेदन खारिज कर दिया जाएगा, अधिनियम की धारा 86 में प्रदान किया गया है जो एक अनिवार्य आदेश देता है।

(जोर दिया गया)

11. बाद में, पश्चिम बंगाल भूमि सुधार अधिनियम, 1955 जैसे एक अन्य विशेष विधि पर विचार करते समय गोपाल सरदार (पूर्वोक्त) में इस न्यायालय को मंगू राम (पूर्वोक्त) पर टिप्पणी करने का अवसर मिला, जहाँ यह कहा गया है कि हुकुमदेव नारायण यादव (पूर्वोक्त) के निर्णय को इस न्यायालय के संज्ञान में नहीं लाया गया था जब मंगू राम (पूर्वोक्त) पर निर्णय लिया गया था (हमने पिछले पैराग्राफ में मंगू राम पर चर्चा की है)। अपीलार्थी श्री अग्रवाल के विद्वान अधिवक्ता ने न्यायालय की इस टिप्पणी पर बहुत अधिक भरोसा किया है।

जैसा कि हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं, हुकुमदेव नारायण यादव निर्वाचन विधि से संबंधित हैं जो सीमा अवधि के संबंध में पूरी तरह से अलग श्रेणी में आते हैं। इस न्यायालय की मात्र यह टिप्पणी कि मामले पर विचार नहीं किया गया, इसका अर्थ यह नहीं है कि मंगू राम (पूर्वोक्त) में न्यायालय द्वारा प्राप्त संपूर्ण निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण हैं। हमें गोपाल सरदार के निर्णय एवं तथ्यों तथा संदर्भ हेतु उसकी सराहना करनी चाहिए जिस पर यह निर्णय आधारित है। गोपाल सरदार के तथ्य क्या थे तथा इस न्यायालय के निष्कर्ष क्या थे? गोपाल सरदार में, यह न्यायालय पुनः पश्चिम बंगाल भूमि सुधार अधिनियम, 1955 से संबंधित सीमा अवधि एवं परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अनुप्रयोग का निपटान कर रहा था।

पश्चिम बंगाल भूमि सुधार अधिनियम, 1955 की धारा 8 ने सह-हिस्सेदार की भूमि के हस्तांतरण के लिए "रैयत" को कुछ अधिकार दिए, जो उसके पूर्व-अधिकार के अधिकार का प्रयोग करता है, लेकिन इस अधिकार का प्रयोग "वाद हेतुक की तिथि से 4 महीने की अवधि के भीतर" किया जाना था। इसी अधिनियम की धारा 14-ए तथा धारा 19 में अपील की अवधि पर चर्चा करते समय यह प्रावधान किया गया है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 लागू होगी। इस प्रकार यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यद्यपि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 अपील के मामले में लागू होगी, लेकिन यह उस मामले में लागू नहीं होगी जब कार्यवाही स्वयं अधिनियम की धारा 8 के तहत वाद के रूप में शुरू की जानी थी जिसे 4 महीने की अवधि के भीतर किया जाना था।

पश्चिम बंगाल भूमि सुधार अधिनियम, 1955 की धारा 8 इस प्रकार है:

"8. सह-हिस्सेदार या समीपस्थ किरायेदार द्वारा क्रय का अधिकार - (1) यदि किसी रैयत के भूमि के किसी भूखण्ड का कोई भाग या हिस्सा, भूमि के भूखण्ड में रैयत के सह-हिस्सेदार के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को अन्तरित किया जाता है, तो भूमि के भूखण्ड में बरगादार, ऐसे अन्तरण की तिथि से तीन माह के अन्दर, या भूमि के भूखण्ड में रैयत का कोई सह-हिस्सेदार, धारा 5 की उपधारा (5) के अधीन दी गई सूचना की तामील के तीन माह के अन्दर, या ऐसे भूमि के भूखण्ड से लगी हुई भूमि पर कब्जा रखने वाला कोई रैयत, ऐसे अन्तरण की तिथि से चार माह के अन्दर, भूमि के भूखण्ड के उक्त भाग या हिस्से को, धारा 14-ड में उल्लिखित सीमा के अधीन रहते हुए, उस रकम के दस प्रतिशत की अतिरिक्त राशि के साथ प्रतिफल राशि जमा

करने पर, उसे अन्तरित करने हेतु प्रादेशिक अधिकारिता रखने वाले मुंसिफ को आवेदन कर सकता है।

इन दो प्रावधानों पर इस न्यायालय ने यही कहा है:

"19. हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि विलंब की माफी मांगने के लिए अधिनियम की धारा 8 के तहत किए गए विलम्बित आवेदन की सहायता हेतु सीमा अधिनियम की धारा 5 का उपयोग नहीं किया जा सकता है। धारा 8 के तहत प्रदत्त पूर्व-अधिकार का अधिकार कमजोर होने के साथ-साथ एक वैधानिक अधिकार भी है; इसे उक्त धारा के अनुसार सख्ती से प्रयोग किया जाना चाहिए तथा इसमें समानता के विचार का कोई स्थान नहीं है। इन अपीलों में पाए गए तथ्यों के आधार पर, धारा 8 के तहत आवेदन हस्तांतरण की तिथि से चार महीने के भीतर नहीं किए गए थे, बल्कि वे क्रमशः हस्तांतरण की तिथि से चार साल और छह साल बाद किए गए थे, जो समय के कारण निराशाजनक रूप से बाधित थे। सीमा अधिनियम की धारा 5 का लाभ धारा 8, धारा 3 के तहत किए गए आवेदनों को उपलब्ध नहीं होने के कारण अनिवार्य रूप से उन्हें खारिज कर दिया जाता है।"

न तो हुकुमदेव नारायण यादव तथा न ही गोपाल सरदार अपीलार्थी के मामले में मदद करेंगे क्योंकि ये दोनों मामले विशेष विधि से संबंधित हैं, जिनमें सीमा अवधि विहित की गई है तथा कानून में निहित भाषा की अभिव्यक्ति बहुत स्पष्ट है कि किसी भी परिस्थिति में ऐसी सीमा

को माफ नहीं किया जा सकता है। प्रासंगिक प्रावधानों पर पहले ही चर्चा की जा चुकी है।

वर्तमान मामले में, दं.प्र.सं. की धारा 378 या संहिता में किसी अन्य स्थान पर ऐसा कोई अपवर्जन प्रावधान नहीं है। इसलिए, दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील में परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 2 एवं 3 के साथ धारा 5 का लाभ उठाया जा सकता है। वर्तमान मामले में परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के गैर-आवेदन के संबंध में अपीलार्थीगण द्वारा उठाए गए तर्कों में कोई बल नहीं है तथा इसलिए अपील खारिज की जाती है।

12. इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 20.03.2017 का अंतरिम आदेश निरस्त किया जाता है। रजिस्ट्री को यह निर्देश दिया जाता है कि वह इन कार्यवाहियों से दिल्ली उच्च न्यायालय को अवगत कराए ताकि मामला जारी रह सके।

अंकित ज्ञान : द्वारा तैयार की गयी शीर्षटिप्पणियां मामले का परिणाम: याचिका
खारिज कर दी गई।

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Disclaimer: The translated judgment in vernacular language is meant for the restricted use of the litigant to understand it in his/her language and may not be used for any other purpose for all practical and official purposes, the English version of the judgment shall be authentic and shall hold the field for the purpose of execution and implementation.